DEV SANSKRITI VISHWAVIDYALAYA

ISSN: 2581-4885

INTERDISCIPLINARY JOURNAL OF YAGYA RESEARCH

Peer Reviewed Research Journal

VOLUME 1 ISSUE 2

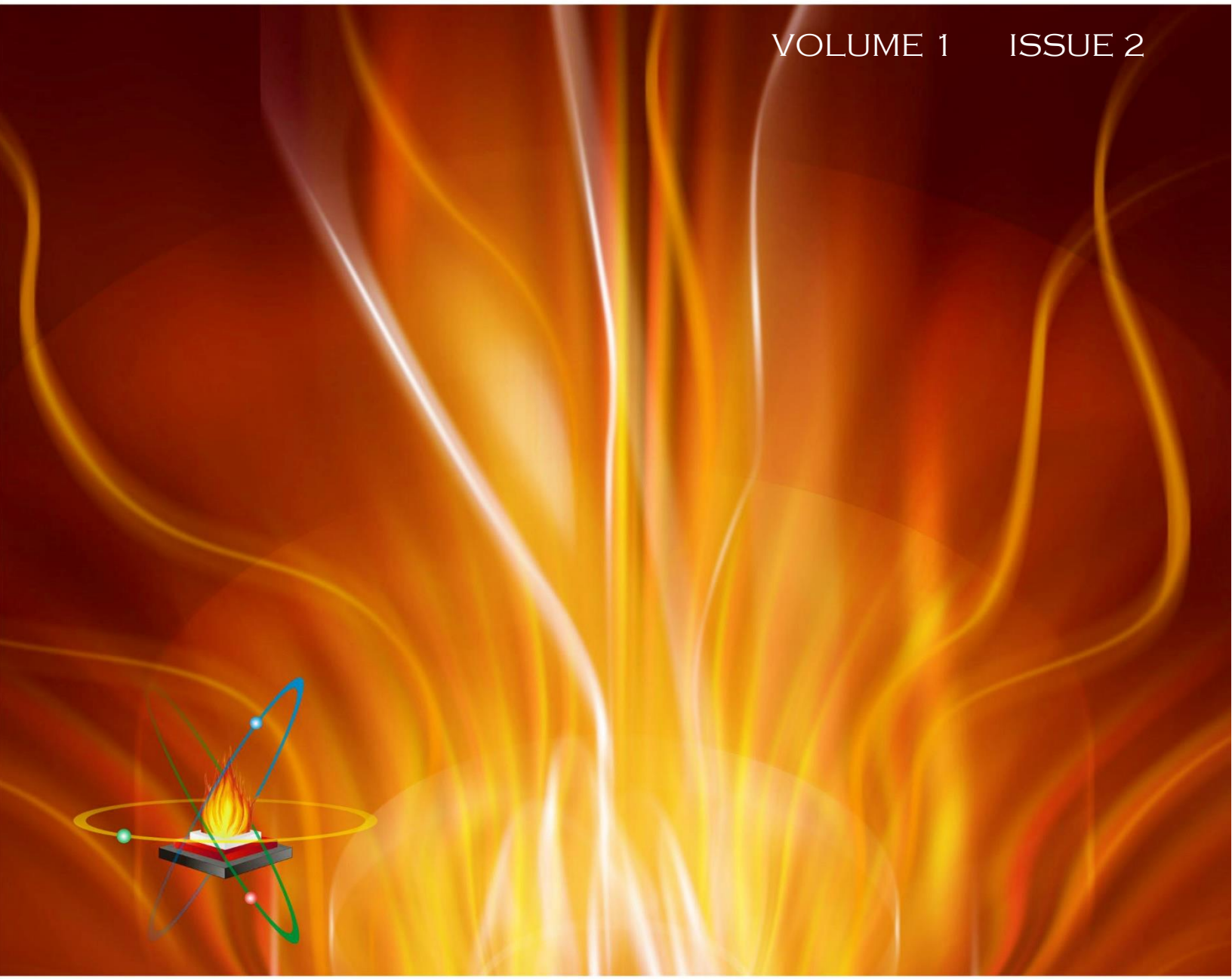

PUBLISHED BY:
DEV SANSKRITI VISHWAVIDYALAYA, Shantikunj, Haridwar - 249411 (UTTARAKHAND)

www.dsvv.ac.in

OPEN ACCESS ONLINE JOUNRAL

यज्ञ स्वास्थ्य का पर्याय

डॉo वीणाविश्नोई शर्मा[1*]

[1*]संस्कृत विभाग-कन्या गुरुकुल परिसर, गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय हरिद्वार

*संवादी लेखक: वीणाविश्नोई शर्मा. ईमेल:veenavishnoisharma@rediffmail.com

सारांश. समस्त लौकिक व वैदिक संस्कृत वाड्.मय में यज्ञ शब्द बहुव्यापी अर्थों में प्रयुक्त होता है। यज्ञ शब्द अनेक अर्थों से युक्त होते हुए भी मुख्यतया अग्नि में वेद मन्त्रों से विशेष विधि से साकल्यों का हवन करने के अर्थ में सर्वाधिक प्रयुक्त है। आयु संवर्द्धन में यज्ञ ही महत्वपूर्ण है। पूर्व मीमांसा दर्शन, वैदिक वाड.मय तथा निरुक्त आदि के प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यज्ञ की परिभाषा और स्वरुप पूर्णतः वैज्ञानिक हैं। यज्ञ का आयु संवर्द्धन में सुनिश्चित योगदान है। स्वास्थ्य के लिए यज्ञ विधान अमृतोपम है। यज्ञ से विचारों का शोधन, वायु का औषधीकरण, एवं रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता हैं। यज्ञ द्वारा त्वक्रोग, एक्जिमा, यक्ष्मा तथा दमा रोग, उन्माद या एपिलेप्सी व हिस्टीरिया रोग, गर्भ दोष निवारण, ज्वर चिकित्सा आदि रोगों के उपचार के विधान मिलते हैं। हमारे ऋषि मुनि साक्षात्कृतधर्मा और उच्चकोटि के वैज्ञानिक थे। पदार्थ विज्ञान से लेकर चेतना के विभिन्न घटकों का गहन शोध उनके द्वारा सम्पन्न होता रहा है। यज्ञ इन ऋषियों के शोध का अनुपम उपहार है। इस शोध प्रक्रिया द्वारा यज्ञ- चिकित्सा पूर्ण रुप से विकसित हुई है। यह एक समग्र जीवन पद्धति है, जिसको स्मरणपूर्वक अपनाने वाला सदैव स्वस्थ, प्रसन्न, तेजस्वी, यशस्वी होता हुआ दीर्घायु प्राप्त करता है।

कूट शब्द. यज्ञ, यज्ञ चिकित्सा, आयु, स्वास्थ्य

प्रस्तावना

समस्त लौकिक व वैदिक संस्कृत वाड्.मय में यज्ञ शब्द बहुव्यापी अर्थों में प्रयुक्त होता है। इसीलिए समस्त ज्ञान -विज्ञान , चिकित्सा -आयुर्वेद , शासन-प्रशासन , सामाजिक, आर्थिक एवं शिक्षाक्षेत्र के सभी गूढार्थ यज्ञपदवाच्य हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन आचार्यों के बहुव्यापी दृष्टिकोण को समझते हुए स्वामी दयानन्द ने अपने वेदभाष्यों तथा अन्य सभी ग्रन्थों में यत्र- तत्र सर्वत्र इन्ही अर्थों में यज्ञ का विस्तृत वर्णन किया है। यद्यपि पाणिनि व्याकरण की दृष्टि से यज्ञ शब्द यज् धातु से जिसका अर्थ देवपूजा संगतिकरण व दान है , भाव में नड़् प्रत्यय करके निष्पन्न होता है। धात्वर्थ तीन अर्थों में दृष्टिगोचर होते हुए भी देवपूजा, संगतिकरण व दान क्रियायें भी क्षेत्रभेद से अनेक अर्थों को अपने अन्दर समाहित करने में समर्थ हैं। इसलिए व्याकरण की दृष्टि से भी ऋषि दयानन्द का बहु अर्थक यज्ञ शब्द का मानना युक्तियुक्त है, क्योंकि अपने से वरिष्ठ व्यक्ति, विविध गुणों से युक्त होने पर पूजा का अधिकारी है और उसका सभी प्रकार से सत्कार करना यज्ञ है। समवयस्कों तथा आप्त जनों के साथ संगति करना एवं कनिष्ठों, वरिष्ठों को भी सेवा दान देना यज्ञपदवाच्य है। जिस प्रकार व्यक्ति अपने बड़े- छोटे तथा समवयस्कों को अपने व्यवहार, कार्यकुशलता के द्वारा उन्हें अपने जीवन के लिए उपयोगी बनाता है, उसी प्रकार वह भी दूसरों के लिए उतना ही उपयोगी बन सके। यही नहीं जड़ पदार्थों पृथ्वी, जल, वायु, तेज, आकाश को भी पूजा, संगतिकरण व दान के योग्य बना देने के क्रियाकलाप को यज्ञ कहते है। इन्हीं भावों को वैदिक वाड्.मय के उद्भट विद्वान स्वामी समर्पणानन्द ने शतपथ ब्राह्मण में इस प्रकार कहा है - *सामुदायिकं योगक्षेमुद्दिश्य सूदायगतया क्रियमाणः कर्मयज्ञः* (1)।

इस प्रकार यज्ञ शब्द अनेक अर्थों से युक्त होते हुए भी मुख्यतया अग्नि में वेद मन्त्रों से विशेष विधि से साकल्यों का हवन करने के अर्थ में सर्वाधिक प्रयुक्त है तथा इसी अर्थ में वह रुढ़ भी है। यास्क ने भी निरुक्त में यज्ञ का निर्वचन करते हुए कहा है - *यज्ञः कस्मात्! प्रख्यातं यजति कर्मति नैरुक्ताः* अर्थात् यज्ञ वह है जिसमें यज् धात्वर्थक यज्ञकर्म जो अति प्रसिद्ध हैं, पाये जायें।

महर्षि दयानन्द ने विषय भेद की दृष्टि से वेदों को चार भागों में विभक्त किया है। - विज्ञान, कर्म, उपासना और ज्ञान। इनमें द्वितीय विषय कर्मकाण्ड क्रिया प्रधान होता है। मुख्य रुप से इसके दो प्रयोजन हैं - परमपुरुषार्थ की सिद्धि और लोकव्यवहार की सिद्धि। यह कर्मकाण्ड चार प्रकार के द्रव्यों से किया जाता है - सुगन्धियुक्त, मिष्ठगुणयुक्त, पुष्टिकारक गुणयुक्त तथा रोगनाशकगुणयुक्त। इन चारों द्रव्यों को शुद्ध संस्कारित करके अग्नि में जब होम किया जाता है तो उससे सम्पूर्ण जगत को सुख मिलता है। - *स चाग्निहोत्रमारभ्याश्वमेधपर्यन्तेषु यज्ञेषु सुगन्धिमिष्ठरोगनाशकगुणैर्युक्तस्य सम्यक् संस्कारेण शोधितस्य द्रव्यस्य वायुवृष्टिजलशुद्धिकरणार्थमग्नौ होमः क्रियते, स तद्वारा सर्वजगत् सुखकार्यैव भवति।* (2)।

क्योंकि इस यज्ञ से जो वाष्प उठता है वह वायु और वृष्टि जल को निर्दोष व सुगन्धित करता हुआ जगत् के लिए सुखदायक होता है। इसलिए यह यज्ञ परोपकार के लिए ही है। - *तथैव यज्ञाद्यो वाष्पो जायते स वायुं वृष्टिजलं च निर्दोषं कृत्वा सर्वजगति सुखायैव भवति।* (3)।

जो हवन करते समय द्रव्य अग्नि में डाले जाते हैं, उससे धुआँ और वाष्प उत्पन्न होते हैं, क्योंकि अग्नि का यही स्वभाव है कि पदार्थों में प्रवेश करके उसको छिन्न- भिन्न कर देता है, जिससे वे हल्के होकर वायु के साथ उपर आकाश में चढ़ जाते हैं। उनमें जितना जल का अंश है वह वाष्प कहलाता है और जो शुष्क है वह पृथ्वी का भाग है, उन दोनों के योग का नाम धूम है। जब वे परमाणु मेघ मण्डल में वायु के आधार से रहते हैं, जो परस्पर मिलकर बादल बनते हैं उससे वृष्टि, वृष्टि से औषधि, औषधि से अन्न, अन्न से धातु - *यो होमेन सुगन्धयुक्तद्रव्यपरमाणुयुक्त उपरिगतो वायुर्भवति स वृष्टिजलं शुद्धं कृत्वा वृष्ट्याधिक्यमपि करोति* (4)।

इसी प्रकार मनुस्मृति में कहा गया है - *अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते। आदित्याज्जायते वृष्टिर्वृष्टेरन्नं ततः प्रजा* (5)। अर्थात् अग्नि में अच्छी प्रकार डाली हुई आहुति सूर्य के पास

जाती है ,सूर्य से वर्षा होती है , वर्षा से अन्न उत्पन्न होता है , अन्न से प्रजा की रक्षा होती है।

जो होम की परमाणु युक्त शुद्ध वायु है वह दुर्गन्धयुक्त वायु को निकालकर देशस्थ वायु को शुद्ध करके रोगों का नाश करने वाला होता है और मनुष्यादि सृष्टि को उत्तम सुख प्राप्त कराता है । इसीलिए महर्षि दयानन्द ने वेदोक्त यज्ञ करने का आदेश स्थान - स्थान पर बलपूर्वक कहा है - *यज्ञः कर्तव्यः इतीमप्याज्ञा तेनैव दत्तास्ति , तामपि च उल्लंघयति , सः अपि पापीयान्सन् क्लेशवांश्च भवति। 1. अस्मात् कारणात् सर्वोपकाराय सर्वैमनुष्यैर्यज्ञः कर्तव्य एव। 2. अतः कारणाद्यज्ञः कर्तव्य एवेति। 3. तस्माद्धोमकरणमुत्तमेव भवतीति निश्चेत्तव्यम्।* दयानन्द जी ने अपने अमरग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में भी यज्ञ को नैरोग्य का कारण कहा है। जब तक होम करने का प्रचार रहा तब तक आर्यावर्त देश रोगरहित और सुखों से पूरित था (6)।

यज्ञ को सम्पन्न करने के लिए निम्न आयोजन करने पड़ते हैं अर्थात् निम्न वस्तुओं की आवश्यकता पड़ती है- 1. कार्यकर्ता 2. स्थान 3. उपकरण या साधन 4. वेदी 5. साकल्य 6. विधि औचित्य तथा विशेषता 7. उपयोगिता 8. वर्तमान समय में उसका प्रचार -प्रसार।

यज्ञ की उपयोगिता गरिमा ओर महिमा के उल्लेख अनेकशः हुए हैं (7)। इसको विभिन्न सांसारिक कामनाओं की पूर्ति का मुख्य साधन माना गया है। दीर्घायु, तेज, ब्रह्मवर्चस्, स्वर्ग, श्री, यश, पराक्रम और भोजन (8), पशु, अन्न (9), प्रजा (10) आदि कामनाओं की पूर्ति यज्ञ से सम्भव है। यज्ञ परम शक्ति का स्रोत है। यह यज्ञकर्ता को समस्त पापों से मुक्त करते हैं (11)। वेद में प्रजापति के सम्पूर्ण कार्यों का निर्वाहक यज्ञ को बताया गया हैं। कौषितकि ब्राह्मण में भी मानवीय अंगों को यज्ञांग रुप में निरुपित करते हुए यज्ञ पुरुष का सविस्तार विवेचन किया गया है (12)। पुरुष सूक्त में यज्ञ क्रियाओं से सृष्टि की उत्पत्ति का प्रतिपादन हुआ है (13)। अन्य लौकिक कामनाओं की पूर्ति के अतिरिक्त स्वर्ग प्राप्ति, शान्ति प्राप्ति शत्रुनाश, लोकप्राप्ति आदि भी यज्ञों के उद्देश्य कहे गये हैं (14)।

फलाकांक्षा से किये गये यज्ञ कर्म द्वारा फल प्राप्ति अवश्यम्भावी है तो निष्काम भावना से किये गये यज्ञकर्म निःश्रेयस् के साधक हैं (15)। इसीलिए श्रीमद्भगवतगीता ने यज्ञ को सर्वार्थसिद्धि का साधक बताते हुए कहा है कि - "एष वः अस्त्विष्टकमधुक्" (16)। यज्ञ की उपयोगिता में बाह्य पर्यावरण के प्रदूषण से निदान जितना महत्वपूर्ण है उतना ही उल्लेख्य है, उससे सम्भव होने वाले रोगनाशन, दीर्घायुष्य और अन्य शारीरिक एवं मानसिक उपलब्धियाँ।

यज्ञ का अग्नि से साक्षात् सम्बन्ध है। अग्नि तत्व की प्रधानता जीनवी शक्ति का सार हैं। अतः यज्ञकर्म को शारीरिक मानसिक और आत्मिक शक्तियों का संपोषक मानना तत्वतः वैज्ञानिक शक्ति से प्रेरक विचार है। वैदिक संहिताओं में यत्र- तत्र इस तथ्य को विविधतया प्रस्तुत किया गया है। ऋग्वेद के एक मन्त्र में अग्नि को संबोधित करते हुए जीवनी शक्ति, सामथ्र्य, पुष्टि और इससे समवेत आयुष्य का आधार जातवेदस् में प्रतिदिन "समिधाएँ प्रदान करना कहा गया है। - *स घा यस्ते ददाशति समिधा जातवेदसे। सो अग्ने धत्ते सुवीर्य स पुष्यति।* (17)।

अथर्ववेद में दीर्घायु प्राप्ति के उपायों के प्रकाशक सूक्त प्राप्त होते हैं, जिनका देवता 'आयु' है (18)। जातवेदस् से दीर्घ आयु की कामना की गई है, जिसमें जातवेदस् अग्नि के माध्यम से अनुष्ठानादिक क्रियाओं के विधिवत् सम्पादन द्वारा आयुष्य लाभ की प्रार्थना की गई है- "*आयुरस्मै धेहि जातवेदः*" (19)। अथर्ववेद के उन्नीसवें काण्ड में प्राप्त "*दीर्घयुत्वम्*" सूक्त का देवता सूर्य है। इसमें सौ वर्ष तक देखने, जीवित रहने, पुष्ट रहने की कामना व्यक्त की गई है। - "*पश्येम शरदः शतम् जीवेम, शरदः शतम्*" (20)।

अथर्ववेद के एक मन्त्र में इन्द्रिय शक्तियों, प्राण और तेज के साथ आयु की अविच्छिन्नता के लिए यज्ञ की गरिमा का गुणगान किया गया है "मन लगाकर दैवी शक्तियों के साथ घी की अविच्छिन्न गति हवि से संवत्सर को बढ़ाती है। हमारी कान, आँख और प्राण की शक्तियाँ अविच्छिन्न रहें, आयु और तेज से हम अविच्छिन्न रहें। - "*घृतस्य जूतिः समना सदेवा संवत्सरं हविषा*

वर्धयन्ती। श्रोतं चक्षुः प्राणःअच्छिन्नों नो अस्त्वच्छिन्न वयमायुषो वर्चसः"।। (21)।

'एति इति आयुः' क्षण प्रतिक्षण, दिन-प्रतिदिन, वर्ष-प्रतिवर्ष क्रम से जो नियमित रुप से जीवन चल रहा है, उसे आयु शब्द से जाना जाता ह।। श्रीमद्भागवत गीता के चतुर्थ अध्याय में जहाँ यज्ञों की गणना की गई है, वहीं पर श्रौत्र आदि इन्द्रियों को संयम की अग्नि में, शब्द आदि विषयों को इन्द्रियों की अग्नि में हवन करने की गम्भीर चर्चा भी की गई है (22)। इसके मनन से स्पष्ट होता है कि आयु की गति स्वयं में एक यज्ञ है। इस यज्ञ में जब जीवन असावधान होता है जो उसकी आयु अर्थात् जीवन गति लड़खड़ाने लगती है और मृत्यु निकट आने लगती है। यह तथ्य स्वयं ही इस सिद्धान्त का प्रतिपादक है कि आयु संवर्द्धन में यज्ञ ही महत्वपूर्ण है।

पूर्व मीमांसा दर्शन, वैदिक वाड.मय तथा निरुक्त आदि के प्रमाणों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यज्ञ की परिभाषा और स्वरुप पूर्णतः वैज्ञानिक हैं। यज्ञ का आयु संवर्द्धन में सुनिश्चित योगदान है। यज्ञ के लिए जहाँ बाह्य शुद्धि आवश्यक है वहीं आन्तरिक शुद्धि भी अपेक्षित है। चरक के अनुसार स्वास्थ्य और अस्वास्थ्य मन व शरीर में रहता है । बाह्य शुचिता का सम्बन्ध शरीर से है और आभ्यन्तर शुचिता का सम्बन्ध मन से है। मन उभयात्मक इन्द्रिय है, यह इन्द्रियों के सुख- दुख के आभास को आत्मा तक पहुँचाता है। ये दोनों स्थितियाँ हमारी आयु की क्षीणता में कारण बनती हैं। यज्ञ से जब रोग के आश्रय शरीर तथा मन दोनों ही शुद्ध हो जायेंगे तो यज्ञ प्रवर्तन ही रोगों का अवरोध बन जाता है तथा आयु संवर्द्धन में सहायक होता है।

स्वास्थ्य के लिए यज्ञ किस प्रकार अमृतोपम है

यज्ञ से विचारों का शोधन

यज्ञ से सुरभित वैदिक मन्त्रों की मधुर ध्वनि से पवित्र वातावरण में सद्विचारों का स्वतः उच्छलन होता है । जिस प्रकार यज्ञाग्नि में सुगन्धित पदार्थों का होम करने से वायुमण्डल शुद्ध होता है, उसी प्रकार विचार भी शुद्ध होते हैं। महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित यज्ञ पद्धति में सर्वप्रथम ईश्वर-स्तुति- प्रार्थनोपासना मन्त्रों में "*विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव*" इस मन्त्र में दुर्गुण, दुव्र्यसनों को दूर करने और जो कल्याणकारक गुण कर्म स्वभाव हैं, उन्हें प्राप्त करने की प्रार्थना की गई है। यज्ञ से दूषित विचार दूर होते हैं और कल्याणकारी विचार चहुँ ओर से प्राप्त होते हैं। यज्ञ से '*तन्मे मनः शिव संकल्पमस्तु*' की प्रार्थना साकार होने लगती है। यज्ञकर्ता का मन सदैव कल्याणकारी संकल्प से परिपूर्ण रहता है और चित्त स्वस्थ होता है।

वायु का औषधीकरण

ऋग्वेद में प्रार्थना की गई है "*वात आवतु भेषजम्*' (23) अर्थात् औषधयुक्त वायु चारों ओर प्रवाहित हो। वायु को औषधियुक्त और भेषज युक्त बनाने का सबसे सुगम एवं सशक्त मार्ग है - यज्ञ। यज्ञाग्नि में सुगन्धित, औषधरुप द्रव्यों की हवि प्रदान करने से निकलने वाले सूक्ष्म धूम्र परमाणु प्रदूषित कार्बन परमाणुओं में प्रवेश कर उन्हे शुद्ध तत्वरुप में परिवर्तित कर देते हैं। यज्ञीय धूम्र में वायु के विषैले तत्वों को नष्ट करने की विलक्षण क्षमता है। अथर्ववेद में कहा है - "*वायु अन्तरिक्षस्याधिपतिः*" (24)। यज्ञ से वायु शुद्ध होकर औषधि रुप हो जाती है। यज्ञ की सुरभि से परिपूर्ण वायु नासिका रन्ध्रो से प्रवेश करके वक्षस्थल में फेफड़ों में प्रवेश करती है तो अन्दर के छोटे-छोटे वायु कोशों में यज्ञमयी वायु के भर जाने पर अन्दर का अशुद्ध भाग शुद्ध हो जाता है।

यज्ञ से रोग प्रतिरोधक क्षमता

ऋषियों ने कल्याणकारी व विषनाशक गोघृत का प्रयोग यज्ञ में करना जहाँ अति हितकर बताया है, (25) वहीं रोगनाशक पदार्थों की आहूति का निर्देश दिया है, जो बहुत लाभकारी होता है। यज्ञ में यदि रोगनिवारक पदार्थों की हवि दी जा रही है तो उस यज्ञ से जुड़े व्यक्तियों को रोगप्रतिरोधक शक्ति प्राप्त हो जाती है। जिससे उन पर रोग आसानी से आक्रमण नही कर सकते। यज्ञकर्ताओं की दिनचर्या नियमित होती है। वे समय पर जागते व सोते हैं, इससे भी स्वास्थ्य की रक्षा होती है।

यज्ञ से चिकित्सा

प्रतिदिन यज्ञ द्वारा वायु, जल, ध्वनि, पृथ्वी आदि के प्रदूषण निवारण के साथ-साथ मन्त्रोक्त मधुर अमृतोपदेशों से मन, बुद्धि, चित्त आदि के दोषों को दूर कर देने पर मानव स्वस्थ जीवन प्राप्त करता ही है। दुर्भाग्य से कभी कोई रोग आक्रमण कर भी देता है

तो उसकी चिकित्सा भी यज्ञ द्वारा जितनी प्रभावी और सरल रुप से सम्भव है वैसी अन्य किसी चिकित्सा पद्धति द्वारा नही हो सकती। यजुर्वेद में जहाँ सैंकड़ों कामनाओं की पूर्ति यज्ञ द्वारा वान्छित है, वहाँ - "*अयक्ष्म च मे, अनामयच्च मे, जीवातुश्च मे, दीर्घायुत्व च मे, यज्ञेन कल्पताम्*" (26) के द्वारा प्रार्थना की गई हैकि यज्ञ से मेरे यक्ष्मादि रोग दूर हों।

अथर्ववेद में कहा गया है - "*मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनायकमज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्*" (27) - अर्थात् मैं तुझ रोगी को जीवन प्रदान करने के लिए ज्ञात और अज्ञात बड़े राजयक्ष्मादि रोगों को यज्ञ में हवि प्रदान कर रोगमुक्त करता हूँ। इसका अभिप्राय यह है कि प्रकट या अप्रकट तथा सूक्ष्मातिसूक्ष्म रोगों से मुक्ति प्रदान करने का प्रबलतम साधन यज्ञ है। अग्नि में कृमिनाशक औषधियों की आहूति देकर इन रोगकृमियों को नष्ट कर यज्ञ द्वारा रोगों से बचा जा सकता है। अथर्ववेद में मन्त्र कहते हैं कि अग्नि में हवि रोगकृमियों को उसी प्रकार दूर बहा ले जाती है, जिस प्रकार पानी झाग को। - "*इदं हवियर्विुधानान् नदीफेनमिवावहत्।*" (28, 29)

यज्ञ द्वारा रोगों का उपचार

त्वक्रोग, एक्जिमा, यक्ष्मा तथा दमा रोग

"*न तं यक्ष्मा अरुन्धते नैनं शपथो अश्नुते। यं भेषजस्य गुल्गुलोः सुरभिर्गन्धो अश्नुते।।*" (30) अर्थात् गुग्गुल औषधि की उत्तम गन्ध जिस रोगी को प्राप्त होती है , उसको रोग नही घेरते तथा उसे स्पृश्य रोग नही होता है।

उपरोक्त मन्त्र में गुग्गुल की गन्ध देकर रोगी को स्वस्थ बनाने का आदेश है जो यज्ञाग्नि में डालकर प्रयुक्त किया जाता है। यज्ञ में प्रयुक्त गुग्गुल का प्रभाव वायु द्वारा रोगी की श्वासनलियों से फेंफड़ों में पहुँचकर कफ आदि दोषों को दूर कर देता है और रोग के कीटाणुओं को बाहर लाकर नष्ट करता है तथा रक्त को शुद्ध करता है। इस प्रकार इस गुग्गुल सहित सामग्री का यज्ञ में प्रयोग एक जीवन शक्तिप्रद रसायन की तरह रोगियों पर प्रभाव डालता है।

उन्माद या एपिलेप्सी व हिस्टीरिया रोग

"*त्वया पूर्वमथर्वाणो जघ्नू रक्षांस्योषधे। त्वया जघान कश्यपस्त्वया कण्वो अगस्त्यः।।*" (31) अथर्ववेद के इस मन्त्र में प्रार्थना की गई है कि हे औषधे ! तेरे द्वारा स्थिर चित्त वाले मनोवैज्ञानिक जन अर्थात् चिकित्सक राक्षसों का जिनसे अपनी रक्षा करनी चाहिए, ऐसे रुधिर पीने वाले जन्तु और कृमियों को उनके आक्रमण और प्रभाव से पूर्व ही नष्ट कर देते हैं।

इस रोग में हींग, सरसों, तुलसी, गुग्गुल, भिलावा वाली गन्ध वालीवस्तुओं से यज्ञ करने से उन्माद मिर्गी, हिस्ऑीरिया आदि मात्र सात दिन में लगभग चले जाते हैं।

गर्भ दोष निवारण

"*ब्रह्मणाग्नि संविदानो रक्षोहा बाधतामितः। अमीवा यस्ते गर्भं दुर्णामा योनिमाशये।।*" (32) इस मन्त्र में कहा गया है कि हे नारी ! जो बुरे नाम वाला रोगकृमि व रोग तेरे गर्भ में या योनि में प्रविष्ट हो गया हो जो उसे वेदमन्त्र से युक्त कृमिविनाशक यज्ञाग्नि यहाँ से दूर कर दे।

इस रोग में यज्ञ सामग्री में विशेष रुप से अपामार्ग अर्थात् चिरचिटा, वच, प्रिय बाँसुरा या पिंग, गुग्गुल, किश्मिश, गिलोय आदि का प्रयोग किया जाता है। अतः जिन स्त्रियों में गर्भ नही ठहर पाता या ठहरकर दो तीन महीने में गिर जाता है या प्रसव हो भी जाए तो रोगाक्रान्त होकर शिशु शीघ्र मर जाता है। ऐसी स्त्रियाँ हवि चिकित्सा से लाभ पा सकती हैं, ऐसा वेद का आशय है यथा - "*यस्ते हन्तिपतयन्तं निषत्सुं यः सरीसृपम्। जातं यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि।।*" (33)

ज्वर चिकित्सा

यज्ञाग्नि द्वारा ज्वर के सहकारी कास , सिरोवेदना अंगों का टूटना आदि भी दूर हो सकते हैं , ऐसा अथर्ववेद के 1.12 तथा 5.22 सूक्तों से ज्ञात होता है - "*अंगे - अंगे शोचिषा शिश्रियाणं नमस्यन्तस्त्वा हविषा विधेम। अंकान्समंकान्हविषा विधेमयो अग्रभात् पर्वास्या ग्रभीता।।*" (34) अर्थात् हे ज्वर ! अंग - अंग में ताप के साथ व्याप्त हुए तेरा हवि द्वारा अग्निहोत्र करते हुए हम

प्रतिकार करें। अंगों को जकड़ने वाले जिस ज्वर ने इस मनुष्य के अंगों को जकड़ लिया है, उसके लिए हवि द्वारा पकड़ने वाले पाशों को तैयार करें।

इस यज्ञ में सामान्य सामग्री के साथ मुनक्का, किशमिश, गिलोय, भिलावा, अपामार्ग व गुग्गुल की मात्रा आनुपातिक दृष्टिकोण से मिलाकर सामग्री तैयार की जाती है और जिस स्थान पर नित्य प्रति इस सामग्री से हवन किया जाता है वहीँ मलेरिया या अन्य ज्वर वाले मच्छर आदि नष्ट हो जाते हैं तथा कीटाणुयुक्त वातावरण शुद्ध होकर ज्वर रोधी वातावरण बनता है। टायफायड बुखार में किशमिश मिलाकर यज्ञ सामग्री से यज्ञ करने से अनेक टायफायड रोगी ठीक हुए है।

यज्ञ से मधुमेह चिकित्सा

मधुमेह से पीड़ित रोगियों को यदि दस दिनों तक नित्य अग्निहोत्र में आमन्त्रित किया जाए व यज्ञ से पहले और यज्ञ के बाद उनके ब्लड में शूगर का परीक्षण कराया जाए तो निश्चित रुप से बेहतर परिणाम सामने आयेंगे। इस का सफल प्रयोग गुरुकुल कांगड़ी विश्व विद्यालय के डॉ. देवराज खन्ना व डॉ. नवनीत जी ने किया। इस चिकित्सा हेतु यज्ञ में प्रयोग की गई सामग्री का विवरण इस प्रकार है - समिधा पलाश की, गाय का घी, हरड़ फल, बेलफल, गुडमार पत्तियाँ, आंवला फल, तिल बीज, गिलोय पौधा, चन्दन की लकड़ी का चूरा, गूलर छाल, जामुन गुठली, तुलसी पत्र, मैथी बीज, सदाबहार पत्तियाँ, सफेद फूलवाली, गुग्गुल गोंद और कर्पूर निर्यास।

यज्ञ के लिए जिन वनस्पतियों और समिधाओं को ग्रहण करने का निर्देश वेदों व धर्मशास्त्रीय ग्रन्थों में प्राप्त होता है वे हैं - देवदारु, चन्दन, पलाश, आम्र, पीपल, खदिर आदि। अथर्ववेद के अनुसार ये समिधाएँ सर्वविध रोगाणुओं को नष्ट करती हैं। इन सभी वनस्पतियों के आरोग्यवर्द्धक गुणों का वर्णन सुश्रुत, अष्टांग हृदय, भावप्रकाश आदि ग्रन्थों के द्रव्यगुण भाग में विस्तार से किया गया है। यज्ञ सम्पादन के लिए जिन हवन सामग्री का प्रयोग किया जाता है, उनमें मुख्यतः तीन गुणों वाले द्रव्यों का संग्रह किया जाता है - सुगन्धित, पौष्टिक, आरोग्यदायक (35)। ये तीनों अन्यतम गुणों से युक्त औषधि आरोग्य प्रदान करने वाली हैं। इन द्रव्यों में धृत सबसे मुख्य है। आयुर्वेद शास्त्र के अनुसार घृत बल, वीर्य का उत्पादक तथा पोषक है, रुक्षता नाशक होने के कारण वातजन्य रोगों का निवारक व शामक है। जठराग्नि उद्दीपक होने के साथ ही साथ यह पित्त नाशक एवं पित्तजनित रोगों को दूर करने वाला है। आयुर्वेदीय ग्रन्थों ने पुरातन गोघृत को अमृत कहा है। अथर्ववेद में ऐसा उल्लेख है कि घृत की आहूति समस्त शारीरिक रोगों को दूर करने में सक्षम है (36)। यहाँ यह भी उल्लेख है कि गण्डमाला जैसे दुःसाध्य रोग विधिपूर्वक यज्ञ करने से ठीक हो जाते हैं।

उपंसहार

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आधुनिक विज्ञान एवं चिकित्सा विज्ञान जैसे-जैसे उन्नति करता जा रहा है और भौतिक सुख-सुविधा सम्पन्न होकर प्रकृति से दूर होता जा रहा है, वैसे-वैसे वह अनेक भयंकर बीमारियों जैसे कैंसर, एड्स, मधुमेह, रक्तचाप आदि रोगों का शिकार होता जा रहा है। मैडिकल साईन्स में जिस अनुपात से नये-नये आविष्कार हो रहे हैं, उसी अनुपात में रोगों का ह्रास होना चाहिए परन्तु उसी अनुपात में वृद्धि हो रही है। आज का चिकित्सा विज्ञान उपरोक्त रोगों के मूल कारणों को हटाने में न केवल असफल है, वरन् दूर करने के उपायों से रोगों के और अधिक जीर्ण होने में योगदान कर रहा है, सिवाय शल्य चिकित्सा के। अतः आज आवश्यकता है एक औषधरहित अचूक एवं सर्व सुलभ चिकित्सा की, जिसका नाम है -यज्ञ चिकित्सा।

हमारे ऋषि मुनि साक्षात्कृतधर्मा और उच्चकोटि के वैज्ञानिक थे। पदार्थ विज्ञान से लेकर चेतना के विभिन्न घटकों का गहन शोध उनके द्वारा सम्पन्न होता रहा है। यज्ञ इन ऋषियों के शोध का अनुपम उपहार है। इस शोध प्रक्रिया द्वारा यज्ञ- चिकित्सा पूर्ण रुप से विकसित हुई है। यह एक समग्र जीवन पद्धति है, जिसको स्मरणपूर्वक अपनाने वाला सदैव स्वस्थ, प्रसन्न, तेजस्वी, यशस्वी होता हुआ दीर्घायु प्राप्त करता है।

सन्दर्भ

1. शतपथ ब्राह्मण, वैदिक मंत्रालय अजमेर, संवत 1959

2. सरस्वती स, सम्पादक. ऋग्वेदादिक भाष्य भूमिका - स्वामी दयानन्द सरस्वती, प्रथम संस्करण. श्रीयोगपीठ ट्रस्ट जी. टी. रोड पिप्पली, कुरुक्षेत्र, हरियाणा. पृ. 65

3. सरस्वती स, सम्पादक. ऋग्वेदादिक भाष्य भूमिका - स्वामी दयानन्द सरस्वती, प्रथम संस्करण. श्रीयोगपीठ ट्रस्ट जी. टी. रोड पिप्पली, कुरुक्षेत्र, हरियाणा. पृ. 67

4. सरस्वती स, सम्पादक. ऋग्वेदादिक भाष्य भूमिका - स्वामी दयानन्द सरस्वती, प्रथम संस्करण. श्रीयोगपीठ ट्रस्ट जी. टी. रोड पिप्पली, कुरुक्षेत्र, हरियाणा. पृ. 76

5. प्रलयंकर प्र, सम्पादक. मनुस्मृति 3/76 कुल्लूक भट्ट टीका, , प्रथम संस्करण. न्यू भारतीय बुक कार्पोरेशन दिल्ली

6. सरस्वती स, सम्पादक. ऋग्वेदादिक भाष्य भूमिका - स्वामी दयानन्द सरस्वती, प्रथम संस्करण. श्रीयोगपीठ ट्रस्ट जी. टी. रोड पिप्पली, कुरुक्षेत्र, हरियाणा. पृ. 69-71

7. कौषीतकि ब्राह्मण 13/1, 4/11.2, ऐतरेय ब्राह्मण 25/2, ग्रन्थकार आगम, सायणाचार्यकृतभाष्यसहितम्, आनन्दाश्रम पूना. 1876

8. ऐतरेय ब्राह्मण 1/5, ग्रन्थकार आगम, सायणाचार्यकृतभाष्यसहितम्, आनन्दाश्रम पूना. 1936

9. कौषीतकि ब्राह्मण 4/5, ग्रन्थकार आगम, सायणाचार्यकृतभाष्यसहितम्, आनन्दाश्रम पूना. 1876

10. ऐतरेय ब्राह्मण 17/7, ग्रन्थकार आगम, सायणाचार्यकृतभाष्यसहितम्, आनन्दाश्रम पूना. 1936

11. कौषीतकि ब्राह्मण 18/7, शतपथ ब्राह्मण 2/3/1/6, ग्रन्थकार आगम, सायणाचार्यकृतभाष्यसहितम्, आनन्दाश्रम पूना. 1876

12. कौषीतकि ब्राह्मण 18/7, ग्रन्थकार आगम, सायणाचार्यकृतभाष्यसहितम्, आनन्दाश्रम पूना. 1876

13. शर्मा श्री. ऋग्वेद 10/90, यजुर्वेद 31, अथर्ववेद 19/6, युग निर्माण योजना विस्तार तट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा. 1961

14. ऋग्वेदीय ब्राह्मणों का सांस्कृतिक अध्ययन, दिल्ली. 1991. पृ. 236-270

15. उपाध्याय ब. वेदों में भारतीय संस्कृति. शारदा मन्दिर महताबराय, नागरी मुद्रण कांशी. संवत 1958. पृ. 297

16. गीता 3/10. गीता प्रेस गोरखपुर. संवत 2065

17. ऋग्वेद 3/10/3, ग्रन्थकार आगम, गीता प्रेस गोरखपुर. संवत 2021

18. अथर्ववेद 8/1, 2/5/30, 5/28, 1/35. सप्तमावृत्ति वैदिक मन्त्रालय अजमेर. संवत 2014

19. शर्मा श्री. अथर्ववेद 2/29/21. युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा. 1961

20. अथर्ववेद 19/67/1-8. सप्तमावृत्ति वैदिक मन्त्रालय अजमेर. संवत 2014

21. अथर्ववेद 19/58/1 सप्तमावृत्ति वैदिक मन्त्रालय अजमेर. संवत 2014

22. गीता 4/29-30. गीता प्रेस गोरखपुर. संवत 2065

23. ऋग्वेद 10/186/1. श्री दामोदर सातवलेकर. स्वाध्याय मण्डल सतोड़ा, चैखम्बा प्रकाशन वाराणसी. 1965

24. शर्मा श्री. अथर्ववेद 5/24/8. युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा. 1960

25. शर्मा श्री. अथर्ववेद 6/32/1. युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट, गायत्री तपोभूमि, मथुरा. 1960

26. सातवलेकर दा. यजुर्वेद 18/16. स्वाध्याय मण्डल सतोड़ा. 1943

27. सातवलेकर दा. अथर्ववेद 3/11/1. स्वाध्याय मण्डल, पारडी. 2001

28. सातवलेकर दा. अथर्ववेद 1/2/31, 1/12/32, 1/14/37, 1/15/23, 29. स्वाध्याय मण्डल, पारडी. 2001

29. Verma S, Mishra A, Shrivastava V. Yagya Therapy in Vedic and Ayurvedic Literature: A Preliminary exploration. Interdiscip J Yagya Res. 2018;1(1)

30. सातवलेकर दा. अथर्ववेद 19/38/1. स्वाध्याय मण्डल, पारडी. 2001

31. विश्वबन्धु. अथर्ववेद 4/37/1. वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर. 1960

32. विश्वबन्धु. अथर्ववेद 20/96/11. वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर. 1960

33. विश्वबन्धु. अथर्ववेद 20/96/13. वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर. 1960

34. विश्वबन्धु. अथर्ववेद 1/12/2. वैदिक शोध संस्थान, होशियारपुर. 1960

35. सरस्वती द. संस्कार विधि. परोपकारिणी सभा, अजमेर. पृ. 20

36. विश्वबन्धु. अथर्ववेद 6/32/1. वैदिक शोध संस्थन, होशियारपुर. 1960